ण की विचार प्रधान त्रैमासिकी

तेवरी पक्ष

लड़ते — लड़ते अंधकार से,
लो बुझ गया एक और चराग।

अमर क्रान्तिकारी :

दादा अवनी कुमार चक्रवर्ती

वार्षिक मूल्य १०) रुपए, एक प्रति ३) रुपए

Scanned by CamScanner

जन–जागरण की

विचार प्रधान त्रैमासिकी

तेवरी-पक्ष

अंक ५, वर्ष २, संयुक्तांक
जुलाई–दिसम्बर १९८४

संरक्षक :
लाला रामचरन गुप्ता
सम्पादक :
रमेशराज
सह–सम्पादक :
अरुण लहरी
योगेन्द्र शर्मा
सुरेश त्रस्त

परामर्श समिति :
हरद्वारी लाल वशिष्ठ
भँवरपाल सिंह
श्याम बेबस
देशबन्धु अग्रवाल
अनिल कुमार सक्सैना एडवोकेट
बेजार

सम्पर्क :
१५/१०९, ईसानगर
अलीगढ़–२०२००१

—समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र अलीगढ़ होगा।

सार्थक–सृजन की एक और सार्थक प्रस्तुति
शीघ्र प्रकाश्य तेवरी—संग्रह

एक प्रहार : लगातार

कवि — बेजार

सम्पर्क :
सार्थक—सृजन प्रकाशन
१५/१०९, ईसा नगर, अलीगढ़।

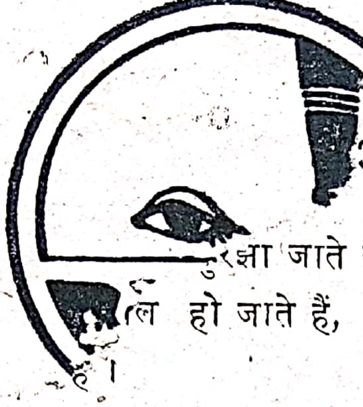

शोक—संवेदना *

'आग लगी, घर के चराग से'

...ुरझा जाते हैं, किन्तु उनकी गमक वातावरण में गमकती रहती है। ...ल हो जाते हैं, किन्तु उनका माधुर्य अन्तःकरण में प्रतिध्वनित होता है।

इकत्तीस अक्टूबर १९८४ को भारतीय राजनीति की एकलब्ध प्रतिष्ठित, प्रतिभा-सम्पन्न, ज्योतिषमय नक्षत्र प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की सतवंत सिंह और बे-अंत सिंह ने अपने घिनौने हाथों से हत्या कर दी।

धिक्कार है अपने को पुरुष कहलाने वाले ऐसे लोगों को, जो नारी पर हाथ उठाकर पुरुषत्व को कलंकित करते हैं। इतिहास साक्षी है नारी ने सदैव हमारे समाज में श्रद्धा और सम्मान पाया है, जैसे सरदार ऊधम सिंह जनरल डायर को गोली मार-कर एक नारी द्वारा पकड़ लिए जाने पर भागने के प्रयास में असफल हो गये। पं० चन्द्रशेखर 'आजाद' का भी एक ऐसा ही उदाहरण है।

मात्र बारह वर्ष की आयु में अपनी माँ के कहने पर शिवाजी का मंदिर पर झंडा फहराना आदि ऐसे उदाहरण हैं जिनके बल पर आज भारतीय सभ्यता और संस्कृति टिकी हुई है। क्या हम भूल जायें कि सरदार भगतसिंह और सरदार ऊधमसिंह सिख थे ? सिख तो थे, लेकिन देश द्रोहियों या धर्मान्धों के हाथ बिके हुए नहीं थे। जगजीत चौहान जो अपने आप को चौहान कहलाते हैं, वे मोहम्मद गौरियों के हाथ यदि बिक गये हैं तो यह न भूलें कि गौरी ने चौहान को गिरफ्तार करने के बाद उसकी आँखें निकलवा ली थीं।

अन्त में हम सिर्फ इतना ही कहना चाहेंगे कि यह हत्या किसी प्रधान मंत्री या श्रीमती इन्दिरा गांधी की हत्या नहीं है बल्कि भाईचारे और एकता की हत्या है, जिसकी जितनी भर्त्सना की जाये उतनी ही कम है।

—:०:—

तेवरीपक्ष-५-५

५०१

Scanned by CamScanner

।। विदाई : एक क्रांति

बलिदान यदि बलिदान ही है, तो वह चर्चा का वि... त्याग यदि निखालिश त्याग ही है तो वह कभी विज्ञापन बनने का प्र... है। जिक्र है देश के उस दीवाने का, जिसने आजादी के यज्ञ में अपना स... चुपचाप होम कर दिया। अपना घर नहीं बसाया, आजन्म कुँवारा ही रहे... समस्त प्रलोभनों से बहुत दूर रहा, कभी अपने उत्सर्ग को भुनाने का प्रयास नहीं किया। गले में हार पड़े, इसके लिए कभी गर्दन नहीं उचकाई।

एक बार घर में आये, एक अतिथि ने कहा, "दादा···घर कुर्सी मेज नहीं हैं...। आपको कष्ट होता होगा...। मैं आपको चार कुर्सी और एक मेज, उपहार स्वरूप देना चाहता हूँ...। क्या आप इस तुच्छ भेंट को स्वीकार करेंगे ?" चेहरे पर वही सदाबहार मुस्कराहट, "अरे भाई······क्या जरूरत है···कुर्सी-मेज का···। ये धरती···हमारा माँ है···। एक दिन···इसी मिट्‌टी में···सबको मिलना रहेगा···। अच्छा लगता···जमीन पे···बइठना···।" एक रंग जो उनके सारे व्यक्तित्व की पृष्ठभूमि में था---कबीर सा-फक्कड़पन।

कभी कहीं अन्याय होते देखते, तो उनका हृदय क्रोध से धधकने लगता था। एक दिन हम लोग, गाँन्धीनेत्र चिकित्सालय, अलीगढ़, से गुजर रहे थे। एक कान्स-बिल ने, एक रिक्शे वाले को गाली दी, और दो-तीन डंडे उसकी पीठ पर जड़ दिये। दादा की आँखें क्रोध से जलने लगीं, चौहत्तर वर्षीय दादा जैसे ताल ठोंक कर लड़ने को तैयार थे। बदन गुस्से से काँपने लगा, छड़ी उठाकर उसे पीटने को दौड़े, "कमजोर को देखकर··डंडा चलाता है···। मुझे मार डंडा···साले···। मैं देखेगा···तुझे···।" हम सब लोगों ने दादा की बात का समर्थन किया और कान्सटेबिल बहुत लज्जित हुआ।

गौरवर्ण, लंबा चौड़ा शरीर, उन्नत ललाट, लम्बी पतली सुन्दर नासिका, विशाल नेत्र, जिनमें करुणा का सागर भी था और क्रोध का दावानल भी, ऐसा था सुदर्शन व्यक्तित्व उनका। 'तेवरी पक्ष' त्रैमासिक, अलीगढ़, के प्रवेशांक के विमोचन हेतु, महान क्रान्तिकारी, विचारक एवं लेखक श्री मन्मथनाथ गुप्त आने वाले थे। हम लोगों ने श्री गुप्त के साथ उनके भी 'सम्मान' कराने की बात की तो बोले, "भाई··गुप्त···मेरा···साथी है। मैं उससे···जरूर मिलेगा···। लेकिन···शम्मान···, वम्मान···मत करना···। मैं दूर से बैठकर···देखता रहेगा।" भाई रमेशराज तथा दादा के पड़ौसी सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव के काफी अनुरोध करने पर वह इस बात के लिए राजी हो पाये। हाँ···यदि सम्मान की ही इच्छा होती, तो बेचारे काँग्रेस में ही

तेवरीपक्ष-५-5

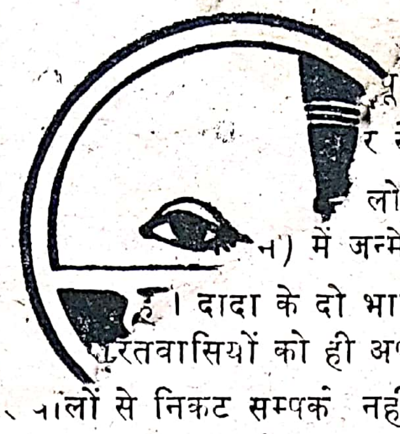

नानी का ब्लेंक-चेक, आजीवन भुनाते रहते, मंत्री हो ...नों फलतीं।

...र से दादा कहा करते थे। अलीगढ़ शहर में दादा या ... लोकप्रिय, अवनीकान्त चक्रवर्ती सन् १६१० में राजशाही ...न) में जन्मे थे। बारह वर्ष की अवस्था में ही पितृशोक झेलना ...ड़ा। दादा के दो भाई और तीन बहनें और थीं परन्तु देश के इस सपूत ने, ...रतवासियों को ही अपना सब कुछ माना, शायद इसी लिए उनका अपने ...वालों से निकट सम्पर्क नहीं रह पाया। चन्द्रपालसिंह जो पहले उनकी सेवा में थे कालान्तर में, उन्हींने उन्हें ही अपना बेटा स्वीकार कर लिया। यह उनका विशाल व्यक्तित्व का एक दिलचस्प पहलू है।

बारह तेरह वर्ष की अल्पावस्था में ही 'वंदे मातरम्' का स्वर उन्हें आकृष्ट करने लगा था। एक दिन उनकी, नन्हें क्रान्तिकारियों की टोली ने विचारा कि कहीं से, कैसे ही, हथियार प्राप्त किये जाँय। शाम के धुंधलके में, एक सिपाही रायफल कंधे पर लिये, ड्यूटी पर था। दादा छिपते-छिपते उसके पास पहुँचे, सिर पर पत्थर से प्रहार किया, और रायफल ले भागे। दादा की सरगर्मी से तलाश होने लगी। वह एक नाले की पुलिया के नीचे छुप गये। आखिर कब तक छुपते, पकड़े गये और सजा हुई।

राजशाही इन्टर कालेज से इन्टरमीडियेट की परीक्षा पास करने के बाद, दादा, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में, स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। इसबार क्रान्ति की मशाल लिए ऐसे निकले, कि घर से नाता ही टूट गया। सन् १६३३ से १६३८ तक अलीपुर जेल में, अपनी क्रान्तिकारी गतिविधियों के कारण, कठोर यातनाएं झेलीं। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने, कलकत्ते में, लाला शंकरलाल जी के घर में, एक प्रमुख बैठक बुलायी, जिसमें देश के प्रमुख और सक्रिय क्रान्तिकारी बुलाये गये। इसी बैठक में उनका परिचय, अलीगढ़ से आये, युवा क्रान्तिकारी, श्री मलखान सिंह से से हुई। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के साथ, यह उनकी अन्तिम भेंट थी।

नेताजी के ही निर्देश के कारण, दादा इलाहाबाद आ गये और क्रान्तिकारियों को संगठित करने में लग गये। यहीं इन्हें बम बनाना, हथियारों का समुचित प्रयोग तथा मरम्मत आदि का ज्ञान प्राप्त हुआ। उनकी पुलिस के साथ कई मुठभेड़ हुयीं। सी० आई० डी०, उनके पीछे पड़ गयी और उन्हें वहाँ से भागना पड़ा। उसके बाद दादा, देहरादून, हरिद्वार, ऋषिकेश, लक्ष्मणझूला आदि के जंगलों में रहे। वहाँ उन्हें कई-कई दिन भूखा रहना पड़ा लेकिन उन्होंने कभी पीछे मुड़कर देखना तो सीखा ही नहीं था। अवसर पाकर, वह लखनऊ आ गये, जहाँ उनकी भेंट आचार्य नरेन्द्र देव से हुयी। दादा आचार्य जी से बहुत प्रभावित हुए, इस भेंट को वह अपनी उपलब्धि मानते थे। वह कई दिन आचार्य जी की कोठी पर रहे, जो फैजाबाद में थी। उसके बाद, उन्हें ब्रह्मचारी वासुदेव के साथ अयोध्या जी के मन्दिर में रखा गया। परन्तु

कवरी पक्ष-५-5

गोरों की सरकारी सी० आई० डी० तो जैसे इस ख...
गयी थी। सन् १९४० में एक दिन, अकस्मात पचास-स...
सोते हुए दादा चक्रवर्ती को आ घेरा। फिर उन्हें फैजाब...
रखा गया। आगरा जेल में उनकी मुलाकात फिर मलखा...

आगरा जेल से, उन्हें देवली कैम्प ले जाया गया। ... सर्वथा निर्जन स्थान पर बनायी गयी, यह जेल जिद्दी कैदियों को 'ठ... बनायी गयी थी। देवली कैम्प में ही दादा की भेंट, भगतसिंह, कुलतार सि... सिंह, मन्मथ नाथ गुप्त, योगेशचन्द्र चटर्जी और जयप्रकाश नारायण जैसे ... सेनानियों से हुई।

देवली कैम्प जेल के, दादा के, संस्मरण रोंगटे खड़े कर देने वाले दुखद थे। कैदियों को बात-बात पर कोड़ों से तथा बन्दूक के बटों से पीटा जाता था। खाने के नाम पर वही पतली दाल और सूखी रोटियाँ थी। जेल में कैदियों पर हो रहे अत्याचार के विरोध में एक दिन युवा क्रान्तिकारियों ने भूख हड़ताल कर दी। सरकारी डाक्टर की उपस्थिति में भूख हड़तालियों के मुँह जबरदस्ती भोजन ठूंसा जाता था। जो हड़ताली अपने दाँत तब भी भींचे रहते थे उनका एक दांत तोड़कर उसमें नली डालकर, मौसमी का रस पहुँचाया जाता था। कई हड़ताली कैदियों की दशा सोचनीय हो गयी। सारे देश में मरणासन्न क्रान्तिकारियों का समाचार उत्तेजना का विषय बन गया। महात्मा गाँधी ने, अपने सेक्रटरी श्री महादेव देसाई को समझौता कराने भेजा। जेल अधिकारियों को अपना दमनचक्र रोकना पड़ा, और देश को इस दुखद स्थिति से मुक्ति मिल पायी।

देवली कैम्प जेल से रिहा होने के बाद, दादा ने क्रान्तिकारियों के छापामार अभियान को फिर शुरू कर दिया। कुछ समय बाद ही उन्हें फिर गिरफ्तार कर, फतेहगढ़ सैन्ट्रल जेल भेज दिया गया। वहां उनकी भेंट, फिर अपने अनन्य मित्र मलखान सिंह जी से हुई। ठाकुर साहब, दादा को अपने साथ अलीगढ़ ले आये और सोनार बांगला का यह अमूल्य रत्न, सदा के लिए अलीगढ़ शहर का हो गया।

आजन्म अन्याय के विरुद्ध जेहाद करने वाला, स्वतन्त्रता संग्राम का, यह गुमनाम सिपाही, अलीगढ़ शहर का दादा चक्रवर्ती, दि० ८-९-८४ को शाम, ६ बजे, चिरनिद्रा में लीन हो गया। जेल में मिली यातनाओं के कारण उसके घुटनों में मर्मान्तक पीड़ा घर कर चुकी थी। अन्तिम दिनों में बिना सहारे वह उठ भी नहीं सकता था।

आइये······अभिवादन करें, भारत माँ के उस लाड़ले सपूत का, क्योंकि स्वतन्त्रता के जिस पौधे के फल हम-आप चख रहे हैं, उसकी जड़ों में रक्त था, उस पुरज़ोर हस्ती का। इतिहास के पन्नों पर भले ही उसका नाम न हो, कुछ हृदय ऐसे हैं, जिनमें वह, यकीनन सदा जीवित रहेगा।

—:०:—

सम्पर्क :
३/२९ सी, लक्ष्मीबाई मार्ग,
अलीगढ़।

तेवरीपक्ष - 4-5

Scanned by CamScanner

किसी भी साहित्यकार के साहित्य की सामाजिक परिवर्तन में जहाँ एक सार्थक और अहं भूमिका रहती है वहीं उस साहित्यकार का चरित्र भी समाज को प्रभावित किये बिना नहीं रहता। यदि पाठक और श्रोताओं के बीच साहित्यकार की कथनी और करनी में अन्तर दिखाई देने लगता है तो पाठक या श्रोता लेखक को देखकर मुँह बिचकाकर ही उसके बाजू से नहीं गुजरते, बल्कि उसके लेखन में भी रुचि लेना बन्द कर देते हैं। तब लेखक और एक तथाकथित समाज सेवी, राजनेता में कोई अन्तर नहीं दिखायी देता। यह स्थिति साहित्यकार के आदर्शवादी साहित्य को दोगलेपन का शिकार ही नहीं करती, बल्कि सामाजिक–क्रान्ति के बीच उसे नपुंसक बना देती है।

सम–सामयिक साहित्य और लेखकीय चारित्रिक भूमिका पर यदि प्रकाश डालें तो हम पायेंगे कि आज का साहित्यकार, लेखन और अपने जीवन के बीच जितना दोगलापन जी रहा है, वह पाठक या श्रोताओं को एक सही दिशा से भ्रमित ही नहीं कर रहा, उन्हें उन आदर्शों और मूल्यों से भी पीछे धकेल रहा है जो सामाजिक–हित के लिये प्रेरित करते हैं।

बात उन दिनों की है जब लेखन लगभग शुरू ही किया था, यदा—कदा किसी पत्रिका में एकाध रचना छप जाती थी। तभी एक जनवादी सम्मेलन का आमन्त्रण मिला। जनवादियों की बड़ी इमेज थी हमारे मस्तिष्क में। आयोजन में एक उत्सुकता से हम भी शरीक हो गये। आयोजन के पहले सत्र में सर्वहारा, प्रेमचन्द, मार्क्स और लेनिन पर जमकर गरमागरम बहस हुई कि हम प्रभावित हुए बगैर न रह सके। तत्पश्चात् भोजन का आयोजन हुआ, जिसमें प्रेमचन्द के 'कफन' के भुने हुए आलुओं पर बहस करने वाले पूड़ी, हलवा, कचौड़ी, रायता और छह–छह सब्जी बड़े मजे अपनी प्रेमिकाओं के प्रेम प्रसंगों के बीच उड़ा रहे थे। एक सज्जन जो एक जनवादी पत्रिका का सम्पादन भी करते हैं, जमीन पर गिरी हुई पूड़ी की पपड़ियाँ उठाकर खा रहे थे, हमतो उनकी इस अदा पर (आज तो यही कहूंगा) मर-मिटे। और फैसला कर लिया कि हो न हो असली जनवादी यही महोदय हैं। हम उनसे मुलाकात करने का मोह न त्याग सके। तब तो झिझक (भाई साहित्य में नौसिखिये थे न ?) के कारण उनसे भेंट न कर सके, लेकिन इस आयोजन के लगभग दो साल बाद मथुरा गये तो उनसे भी मिले। लेकिन वह मिलन के क्षण इतने त्रासद रहे कि तथाकतिथ जनवादियों से घृणा-सी हो गयी। कारण–भीषण दोपहरी में मारे प्यास के गला सूख रहा था, लेकिन उन्होंने पानी तक की नहीं पूछी। बल्कि बड़ी गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा कि "आप अमुक कवि के पास चले जाइये वे आपके सम्मान में गोष्ठी करवा देंगे।" तो जनाब हम उनसे अपने सम्मान में गोष्ठी करवाने के लिये प्यासातुर उनके घर पर पहुँचे थे।

तेवरीपक्ष-4-5 पृ०-1

Scanned by CamScanner

यह हमारी जिन्दगी का का पहला अनुभव था जिसमें हमें पहली बार साहित्यकार के चरित्र से दोगलेपन की बू आयी और हमें उनसे ही नहीं उनके साहित्य से भी घृणा होने लगी। उसके बाद ऐसे कितने ही अनुभव नहीं हुए कि जो साहित्यकार को हमारे मस्तिष्क पर एक प्रश्न चिन्ह की नुकीली कील की तरह ठोंकते चले गये। मंच पर मदिरापान और कवियित्रियों के साथ कवियों की छेड़छाड़, बेहूदा मजाक और उन्हें हमबिस्तर बनाने के मोह में कवि सम्मेलन दिलवाने के लालच हमने अपनी आँखों से देखे।

एक आयोजन में दिल्ली की एक तथाकथित साहित्यिक पत्रिका के संपादक (जो आजकल भूत-प्रेत, तंत्र-कथा विशेषांक निकालने में लगे हुए हैं) का एक ऐसा रूप देखा कि लगा यह अलीगढ़ शहर भी (यदि दो–चार ऐसे ही आयोजन हो गये तो) बीमार शहर बन जायेगा।

इसी बीच एक कवयित्री दिल्ली की एक साप्ताहिक पत्रिका के कार्यालय में एक प्रतिष्ठित व्यंगकार से मिलने गयी थी, का संस्मरण सुनकर साहित्यकार के आदर्शवादी रूप का वो घिनौना रूप सामने आया कि पूछो मत उन सम्पादक महोदय ने उस कवयित्री की रचनाएं यह कहकर अपनी मेज की दराज में रखलीं कि 'रचनाएं तो छप ही जायेंगी, आप कभी शाम को सात बजे के बाद हमारे घर पर तशरीफ लाइये।

एक और जनवादी पत्रिका के सम्पादक (जिन्होंने एक भूतपूर्व मुख्यमंत्री पर कई विशेषांक निकाले थे) से हम मिले तो हमने उन्हें इस दोगलेपन पर टोका तो हँसकर बोले—यार यह क्यूं भूल जाते हो कि इन्हीं मुख्यमंत्री जी के कारण मैं सर्वहारा वर्ग की हजारों समस्याएं हल करता हूँ।

एक और जनवादी लेखक (जो आगरा में रहते हैं) के बारे में हमें पता चला है कि वे छद्म नाम से सैक्स अपराध कथाएं लिखते हैं, इस बावत उनके कुछ साहित्यिक मित्रों से बातचीत हुई तो वे बोले—'दोस्त ! उनके घर का गुजारा इसी से चलता है, ये जनवादी साहित्य क्या किसी को रोटी दे सकता है ?

इस भूमिका को लिखते हुए यहाँ यह भी स्पष्ट कर दें कि हम भी कोई दूध के धुले हुए नहीं हैं, हम में भी ऐसी हजारों कमजोरियाँ हैं कि अपने आपसे शर्म लगने लगती है। फिर भी यही कहना चाहेंगे कि साहित्यकार का जो आदर्शवाद साहित्य में है वह चरित्र में भी होना चाहिए।

रमेशराज

—:o:—

Scanned by CamScanner

तेवरी-पक्ष
पटकीय
अलीगढ़

इसमें कोई सन्देह नहीं, आप हिन्दी कविता को एक नवीन मोड़ देने में समर्थ हुए हैं। खुशवन्तसिंह अपने को नास्तिक, अज्ञेयवादी और क्या–क्या कह-कह कर प्रचारित करते थे, हाँ डाढ़ी और पगड़ी कायम थी। अब उन्होंने खुद अपनी पोल खोल दी।

—श्री मन्मथनाथ गुप्त, दिल्ली

पत्रिका का तेवर देखकर प्रसन्नता हुई। मुझे लगा कि आप इस राष्ट्रीय कार्य के लिए प्रतिबद्ध हैं।

—श्री कमल किशोर गोयनका, दिल्ली

आक्रोश ही नहीं यह, दिशाहीनों के लिए एक सही दिशा है।

—श्री यशपाल वैद, अम्बाला शहर

अपनी सीमाओं में भी प्रोडक्शन तो सुधार ही सकते हो, रचनाएं ठीक-ठाक हैं।

—श्री फूलचन्द मानव, भटिंडा

तेवरी विधा ने अपनी एक अलग पहचान बनाई है। इसे जिन्दा रखना है।

—श्री केशव रत्नम्, बरौनी

उन ठेकेदारों को क्या कहें जो लिखते तो आम आदमी के लिए हैं, लेकिन उनकी कविता आम आदमी की समझ से कोसों दूर रहती है और पुरस्कार पाकर (वह भी राजनेताओं से) अपने आपको ही नहीं, कविता को भी धन्य मान लेते हैं।

—श्री राजेन्द्र सोनी, भोपाल

जब भी इस तरह की छोटी पत्रिकाओं को कसमसाते देखता हूँ, चिन्गारी होने के एहसास से बहुत खुश हो जाता हूँ। तेवरी नाम से नहीं तेवरों से तल्ख रहे।

—श्री राम जैसवाल, अजमेर

२४ पृष्ट ही सही, जूझने के सबूत तो हैं। लुहार की सफलता में आखिरी चोट का ही महत्व नहीं होता, निशाना एक रहे, लगातार रहे। धारा के अनुकूल तैरने में तेवर नहीं होता, कुव्यवस्था के प्रतिकूल तैरने में जीवन की सार्थकता होती है।

—श्री राष्ट्र बन्धु, कानपुर

भाई धीरेन्द्र शर्मा के विचारों से कोई भी सच्चा साहित्यकार असहमत नहीं हो सकता। क्योंकि लेखकों का चरित्र कहीं से भी उनके लेखन में व्यक्त विचारों से मेल नहीं खाता। ये दोहरे चरित्र वाले तथाकथित सभ्य और सम्भ्रान्त साहित्यकार ही परिवेश को धूमिल कर रहे हैं। क्या करेंगे हम-आप उनकी बिरादरी में शामिल होकर सीधे सामान्य जन से ही जुड़ने में हमारे लेखन की सार्थकता है।

—श्री नीतीश्वर शर्मा नीरज, मुजफ्फरपुर

तेवरीपक्ष -4-5 पृ०-3

सार्थक और समर्थ चीज स्वयं अपनी पहचान कायम कर लेती है। बिना किसी बहस, आन्दोलन या सहारे के।
—श्री आलोक भट्टाचार्य, डोम्बिवली

श्री शम्भुदयाल सुधाकर ने तेवरी से सतर्क रहने के लिए कहा है, किसको ? सत्ता के उन भटैतों को जो साहित्य के बड़े-बड़े ठेकेदार बने बैठे हैं। घेवरी या पेवरी विधा भी आ सकती है। शायद श्री सुधाकर जी लघुकथा या नवगीत को न स्वीकारते हों।
—तेवरीबाज श्री रवीन्द्र कंचन, घरघोड़ा

आपने सम्पादक का दर्द एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में उभारा है। राजेन्द्र सोनी, बेजार, आजाद, जगदीश श्रीवास्तव और फजल की कलम ने नीलकंठी तड़प का परिचय दिया है, खुशवन्त सिंह से एक सवाल और—पंजाब या कहीं और जब लेखकों, पत्रकारों की हत्या हो रही थी तब उनका बिरादरी-प्रेम कहाँ निर्यात हो गया था ?
—श्री धीरेन्द्र शर्मा, इलाहाबाद

तेवरी समाज व युवकों के प्रति रचनात्मक दृष्टिकोण रखने हेतु तेवर बदल रही है।
—श्री राजेन्द्र आनन्द, इलाहाबाद

यह तो मित्र जनविरोधी साहित्य के विरोध में छिड़ा हुआ जेहाद है।
—श्री डा० एन० सिंह, सहारनपुर

आप लोगों का यह आन्दोलन एक रूप ले रहा है।
—श्री पूरन सरमा, सिकन्दरा

हो सकता है पत्रिका निकालना मुश्किल हो गया हो। लेकिन धीरेन्द्र शर्मा, जितना निराश होने से काम कैसे चलेगा ?
—श्री निशान्त, पालीबंगा

बेजार की तेवरियों में युग और परिवेश का यथार्थ चित्रण है।
—डा० (श्रीमती) सर्वेश, अलीगढ़

अरुण लहरी का लेख बेहद पसन्द आया।
—श्री नरेन्द्र खरे पंकज, हमीरपुर

यदि यही आन्दोलन विदेश से आया होता तो यहाँ के मूर्धन्य साहित्यकार आलोचना नहीं करते।
—श्री सुहेल अख्तर, अलीगढ़

निश्चित तौर पर कह सकता हूँ कि तेवरी विधा को कुछ आधार मिलेंगे।
—श्री चरण सिंह अमी, इन्दौर

भाव-पक्ष का प्रबल उफान ही तेवरी को रंग दे सकता है।
—श्री निरंजन कुमार 'निराकार', रतलाम

तेवरी-पक्ष से हिन्दी साहित्य में एक नयी आवाज उठी है।
—श्री अजित साहिल, इलाहाबाद

Scanned by CamScanner

मुर्दा मानसिकता के लिए तेवरियाँ जीवन-ऊर्जा दे सकने में समक्ष हैं।

—श्री शत्रुघन सिंह राजपूत, राजनांद गांव

भारतीय जमीन की गन्ध तेवरी से आती है।

—श्री हरिनारायण सिंह 'हरि,' समस्तीपुर

मैं सिर्फ गजलें ही लिखता हूँ, किन्तु तेवरी-पक्ष पढ़कर लगा कि मैं तो अन्जाने ही तेवरियाँ लिख रहा हूँ। —श्री कुन्दन सिंह 'सजल', सीकर

तेवरी का लक्ष्य अ-पक्ष का विरोध है—अव्यवस्था, असत्य।

—श्री रवीन्द्र सुमन, अहमदाबाद

आप मात्रिक छन्दों का समर्थन करते हैं, वर्णिक छन्दों का नहीं। जबकि सवैया घनाक्षरी मात्रिक छन्द न होकर वर्णिक ही हैं। जब आपको इनका परम्परागत रूप स्वीकार नहीं, तो इन छन्दों के प्रति इतना आग्रह क्यूं? तेवरी को नयी धारा या वाद के रूप में अभिहित करें। एक सुदृढ़ समाज की सही व्यस्था क्या हो, इस पर भी विचार करें। तेवरी में प्रयुक्त भाषा क्या जनसामान्य की भाषा है? प्रेम-प्यार भी कोई छूत की बीमारी नहीं है। हम रोजमर्रा के जीवन में इसके लिए तरसते हैं।

—श्री रामेश्वर काम्बोज हिमांशु, बरेली

क्रान्तिकारी रामप्रसाद 'बिस्मिल' की तेवरियां इस अंक की विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं। —श्री रामचन्द्र असित, हजारीबाग

कृपया पुस्तक समीक्षा में इस (तेवरी) आन्दोलन का प्रदर्शन न करें।

—श्री राजकुमार निजात, सिरसा

प्रत्येक माँ अपनी सन्तान को साहसी और उद्यमी देखना चाहती है। अत्याचार को सहन करना भी अपराध ही है। —श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया

फजल इमाम की तेवरी में—'चोरों की इस बस्ती में हर कोई लुटेरा है', अरे उसे क्यूं नहीं सामने लाते? जिसे ये लुटेरे लूट रहे हैं। उसी को सामने लाने में तेवरी की सार्थकता है। —श्री नवारुण बर्मा, गुवाहाटी

आज की व्यवस्था की पीठ पर कोड़े लगाने······में तेवरी-पक्ष जैसी लघु पत्रिकाओं की भूमिका महत्वपूर्ण सिद्ध होगी। —श्री शम्भूसिंह श्रीवास्तव, हवड़ा

और ये भी—

'तथाकथित साहित्यकार' की आखिरी पंक्तियाँ बहुत सारे सिखों की आत्मा और भावनाओं को ठेस पहुँचा गयी हैं जिनकी रग-रग में भारतीयता और राष्ट्रप्रेम आज भी अन्य किसी भारतीय से कम नहीं है। आपको मालूम नहीं कि गैर

सिखों में भी खुशवन्त सिंह जिन्दा हैं और सिखों में भगत सिंह । आपको इसअपराध के बदले अगले अंक में क्षमा माँग लेनी चाहिए । —श्री फखरुद्दीन बेसर, गुड़गावां

भगवान करे (या रमेशराज करे) तेवरी भी साहित्यक विधा में गिन ली जाय और देवराजों' सुरेश त्रस्तों, अरुण लहरियों का कल्याण हो जाये । कोई पूछे कि सॉब तेवरी कहाँ मेन्युफैक्चर होती है तो झट मुँह से निकलेगा—अलीगढ़ । अलीगढ़ को ऐसी उचाइयां दिलाने वाले जनाब रमेशराज को मेरा आदाब !

खूब लिखिए तेवरियां और खूब छापिए उन्हें तेवरी पक्ष में । लेकिन एक सवाल जरूर करूँगा आपसे ? तेवरी गजल के शिल्प में क्यों लिख रहे हैं आप ? आपकी पत्रिका तेवरी-पक्ष में पढ़ा था कि महबूबा के अशआर कहने का वक्त नहीं रहा । वक्त सामाजिकता को बदलने का है और तेवरी जैसा महामन्त्र उसे बदल कर रख देगा । क्यों ठीक है न ! आज की मौजूदा गजल या कविता भी महबूबा के अशआर कहां कहती है ? बुरा न माने तो एक बात कहूँ—अब तक की पढ़ी तमाम तेवरियाँ—गजल का बिगड़ा रूप हैं । कुर्सी, नेता, भूख, महंगाई जैसे पन्द्रह बीस लफ्ज डालकर ऐसी रचनाएं समाज में क्या परिवर्तन लाएंगी ? यह सवाल उभरकर सामने आ खड़ा होता है जब भी तेवरी-पक्ष के अंक देखे ।

यूं नर्मी से कही गई बात भी अपना असर रखती है, जरूरी नहीं चाकू जैसे तेज लफ्ज इस्तेमाल किए जाएं ।

—ज्ञान प्रकाश विवेक,
बहादुरढ़ ।

—:o:—

समकालीन सामाजिक, राजनीतिक विसंगतियों पर
प्रहार करता हुआ
तेवरी संग्रह — १

'अभी जुबां कटी नहीं'

सम्पादक—रमेशराज
(सहयोगी मूल्य—५ रुपये)
अरुण लहरी, अजय अंचल, योगेन्द्र शर्मा
सुरेश त्रस्त, ज्ञानेन्द्र साज, रमेशराज

"पुरस्कार देने आते हैं कौन ? राजनेताओं के नाम पर दुनियाभर के लुच्चे, लफंगे, बेईमान, तस्कर, बलात्कारी, लुटेरे । वे हमें बताना चाहते हैं कि हम कैसे लिखें ? एक पुरस्कार के जरिए साहित्य को खरीदना चाहते हैं । अब आप जगन्नाथ मिश्राओं, पहाड़ियों और अन्तुलों से पुरस्कार लेने के लिए साहित्यकार बने हों तो दूसरी बात है । मेरा मन तो नहीं मानता……लेकिन पुरस्कार देने इन्दिरा गांधी आयें तो एकदम ले लूंगा । पहले तो ज्ञानपीठ या किसी बड़े पुरस्कार में पैसा बहुत होता है । दूसरे इन्दिरा गांधी ऐसी महिला हैं जो इतिहास में जायेंगी । इतिहास में उनका नाम राजेन्द्र यादव या किसी भी साहित्यकार से पहले जायेगा । उस औरत ने 'हिस्ट्री टर्न' कर दी । ऐसे लोगों की मैं इज्जत करता हूँ तुगलक को आप कितना भी कहें कि ये मिटा दिया, वो तोड़ दिया, पर हैं तो वो इतिहास में ।

[redacted]

॥ तेवरियाँ ॥

[एक]

इस सदी में ऐसे कुछ कहर होंगे।
जिन्हें पिलाओगे अमृत, वही जहर होंगे॥

रोजी रोटी के तालिब को यहाँ॥
चन्द नारे ही मयस्सर होंगे॥

होगा कहने को खुला दरवाजा।
भूखी चिड़िया के कटे पर होंगे॥

—आदित्य श्रीवास्तव
७८, बरुआ बाजार, शाहाबाद (हरदोई)

[दो]

शहर में बसने लगे हैं सांप।
शिष्ट बन डसने लगे हैं सांप॥

आस्तीनें देखकर चलिए।
बाजूएं कसने लगे हैं सांप॥

आदमी की सभ्य करतूतें।
देखकर हँसने लगे हैं सांप॥

आज मौसम के वजूद को।
ग्रहण बन ग्रसने लगे हैं सांप॥

—कुन्दनसिंह सजल
उदय निवास, रायपुर (पाटन)
सीकर (राज.)

गजेन्द्र बेबस

पूरा नाम—गजेन्द्रपाल सिंह

जन्म—२४ सितम्बर १९६२, महो (अलीगढ़)

शिक्षा—एम० एस-सी० (गणित)

सम्प्रति—अध्ययन

सम्पर्क—ग्राम—पोस्ट—महो, जिला—अलीगढ़।

लेखन—कविताएं, कहानियां, नाटक आदि।

रचना-प्रक्रिया—आज मानवीय सम्बन्ध आदमी से आदमी के बीच सिर्फ स्वार्थ का समीकरण बनकर रह गये हैं, मेरे लिए कविता आदमी को इस दुरभिसन्धि से बचाने का एक प्रयास है।

—:o:—

तेवरीपक्ष -५-5 ५०-9

Scanned by CamScanner

[एक]

कोयले की जिन्दगी अब तक जिये हैं।
खान के मजदूर जैसे हम रहे हैं।।

रात बबलू ने कहा पापा बताओ।
पेट–भर चावल हमें किस दिन मिले हैं ?

जब कभी भी भूख में आकाश ताका।
पूर्णिमा के चाँद से शोले झड़े हैं।।

एक दूरी को बताते उम्र बीती।
लक्ष्य तक हम मील के पत्थर हुए हैं।।

जब कभी भी क्रान्ति बोई है समय ने।
तिलमिलाते सोच के पौधे उगे हैं।।

[दो]

कैसा हमने निजाम पाया है ?
सत्य का कत्ले–आम पाया है।।

आया जब भी बसन्त का मौसम।
हादसों का पयाम पाया है।।

कैसे कह दें कि बेड़ियां टूटीं ?
देश अब भी गुलाम पाया है।।

अच्छी थी इससे राह की भटकन।
अजीब–सा मुकाम पाया है।।

चाहे जितना दमन करो लोगो।
क्रान्ति ने कब विराम पाया हैं ?

Scanned by CamScanner

[तीन]

अंधेरे में जो लोग पुजते रहे हैं।
सवेरे की लाली से डरते रहे हैं॥

झीलों के पत्थर पे पानी न रोको।
यहाँ पैर लाखों फिसलते रहे हैं॥

इस आग को भी महसूस करिए।
हम बर्फ में भी उबलते रहे हैं॥

गन्तव्य तक राह जाती है वो ही।
जिस राह पर पाँव जलते रहे हैं॥

ये कैसी खुशियों की पुस्तक है यारो।
जहाँ हादिसे सिर्फ पढ़ते रहे हैं॥

[चार]

जिन्दगी से है अपरचित जिन्दगी।
जिन्दगी को यूं समर्पित जिन्दगी॥

सभ्यता का अर्थ इतना रह गया।
जो रहे हैं लोग कल्पित जिन्दगी॥

आदमी का दर्द है उनमें शरीक।
जिन मशीनों को है अर्पित जिन्दगी॥

वक्त ने ठोंका जिसे एक कील–सा।
एक खूंटी–सी है अंकित जिन्दगी॥

हर किसी एहसास के टुकड़े हुए।
और टुकड़ों में है अर्जित जिन्दगी॥

[पांच]

आ गयी जो एक निर्धन के यहाँ ।
अब खुशी मेहमान जैसी हो गई ॥
लोग चन्दे की तरह से खा गये ।
जिन्दगी अनुदान जैसी हो गयी ॥
तोलती है आदमी के दर्द को ।
आंख भी मीजान जैसी हो गयी ॥
जब खुमैनी हो गये विश्वास तो ।
त्रासदी ईरान जैसी हो गई ॥
फूल ने जब बात की आक्रोश की ।
पाँखुरी चट्टान जैसी हो गई ॥

[छः]

जो रह नहीं पाये कभी इन्सान की तरह ।
वे पुजे हैं आजकल भगवान की तरह ॥
घर हमारा रात में वे लूटते यारो ।
दिन में आते जो यहाँ मेहमान की तरह ॥
इतिहास क्या है, कुछ नहीं है, कुफ्र का जादू ।
जिसमें लिखी हैं साजिशें ईमान की तरह ॥
इस दौर में तो सभ्यता, आदर्श या सच को ।
महसूसते हैं लोग अब अपमान की तरह ॥
वो गरीब ही सही खुद्दार है, उसे ।
मत कीजिए प्रयोग पायदान की तरह ॥

अनिल कुमार, 'अनल'

पूरा नाम—अनिल कुमार सक्सैना

जन्म—१ जनवरी १९५६, नगला नौकस (अलीगढ़)

शिक्षा—एम० ए०, एल-एल० बी०

सम्प्रति—अधिवक्ता

लेखन—गीत, कविताएं, लेख आदि ।

सम्पर्क—१७/२५, रंगमहल, जयगंज, अलीगढ़ ।

रचना-प्रक्रिया—समकालीन व्यवस्था के संत्रास से उत्पन्न छटपटाहट, बौखलाहट कविता में सहज ही उतर आती है। देश को बेचने वालों के विरुद्ध कविता मेरे लिए एक हथियार का काम करती है।

—:०:—

तेवरीपक्ष -प-5 पृ०13

Scanned by CamScanner

[एक]

आजकल हर आदमी सहमा हुआ है ।
हर शहर में इस कदर जलसा हुआ है ।।
एकता की बात की जब रहबरों ने ।
देश का तब–तब नया टुकड़ा हुआ है ।।
हर नदी का जल कहीं ठहरा हुआ है ।
इस तरह का भी हमें धोखा हुआ है ।।
बात इन्सानों के जैसी कर रहा है ।
यानि अब वो भी कोई चीता हुआ है ।।
चीखता हैं स्वप्न में बेइन्तहा अब ।
नींद में भी आदमी जागा हुआ है ।।
तेवरी की बात भी अब कर जरा तू ।
क्यों गजल के हुस्न में अटका हुआ है ?

[दो]

बात जुल्मों की बढ़ चली लोगो !
पीर हर मन में अब पली लोगो !
हर तरफ अब तो आदमी की यहाँ !
नस्ल मिलती है दोगली लोगो !
गांधी भुनता रहेगा कब तक यूं ?
चलेगी कितनी धांधली लोगो ?
देश कंचन–सा तपा उस युग में !
आग जिस दौर में जली लोगो !
आज आसार हैं बगावत के !
सब में है एक बेकली लोगो !

Scanned by CamScanner

[तीन]

दुश्मनों के वार पर मुस्काइए।
इस सियासी प्यार पर मुस्काइए ॥

फिक्र मत कीजे किसी के कत्ल की।
आप बस तलवार पर मुस्काइए ॥

द्रोपदी का चीर खींचा जाय तो।
आंसुओं की धार पर मुस्काइए ॥

ब्लैक में सब कुछ मुहैया है यहाँ।
सिरफिरे बाजार पर मुस्काइए ॥

योजनाएं ढो रही हैं फाइलें ॥
देश के उद्धार पर मुस्काइए ॥

[चार]

अब किसे चिन्ता यहाँ ईमान की ?
फिक्र है सबको महज सम्मान की ॥

जब हुए टुकड़े किसी परिवार के।
धूप भी बांटी गयी दालान की ॥

यदि चले बस तो यहाँ के साजिशी।
बेच देगें रोशनी दिनमान की ॥

कर रही हैं खोखला इस देश को।
बे–वजह की आदतें गुणगान की ॥

सत्य का अमृत पियेंगे लोग क्यों ?
जिनकी रुचियां हैं वही विषपान की ॥

[पाँच]

आप जी भर गुनाह कर लीजे।
खड़े फर्जी गवाह कर लीजे॥
सारी खुशहालियों को चर जाओ।
देश को चारागाह कर लीजे॥
रहबरी से ही कुछ नहीं बनता।
रहजनी की भी चाह कर लीजे॥
आपको हक है आप साहब हैं।
चाहें जिसको तबाह कर लीजे॥
कल जुल्मों का मनेगा मातम।
आज बस वाह—वाह कर लीजे॥

[छः]

देश भर में अब महाभारत लिखो।
आदमी को क्रान्ति के कुछ खत लिखो॥
बाग में अब चहचहाहट है नहीं।
हर परिन्दा है यहां आहत लिखो॥
होने लगा आक्रोश लोगों का युवा।
बाजुओं में आगयी ताकत लिखो॥
एक पगड़ी- सा उछाला है जिसे।
अब नहीं जायेगी वो इज्जत लिखो॥
खेलना अंगार से हर दौर में।
है हमारी आज भी आदत लिखो॥

Scanned by CamScanner

बेजार

जन्म—२२ नवम्बर १९४८, पचगाईं खेड़ा (आगरा)

शिक्षा—बी० एस सी/ बी एस० सी, इन्जीनियरिंग (ससम्मान)

सम्प्रति—यांत्रिक अभियन्ता

लेखन—कविताएं

पता—द्वारा वीरेन्द्र कुमार, १/२५३, सुरेन्द्र नगर, अलीगढ़।

रचना-प्रक्रिया—अपने परिवेश के आस-पास नैतिक मूल्यों का ह्रास जब-जब टीसता है, कविताएं दिमाग में चक्रवात की तरह घुमड़ने लगती हैं।

—:o:—

तेवरीपक्ष-५-८ पृ०-17

Scanned by CamScanner

[एक]

कह रहा हूँ विवश हो यह तथ्य मैं।
पल रही है वेदना आतिथ्य में॥

जो विदूषक मंच पर हँसता रहे।
सिसकियाँ भरता वही नेपथ्य में॥

नर्तकी के पाँव घायल हो रहे।
देखता अय्याश कब यह नृत्य में?

सिर्फ समझौता नहीं है जिन्दगी।
एक जलती आग भी है सत्य में॥

[दो]

स्वागत में सभी व्यस्त हैं सरकार की खातिर।
कोई न दवा लायेगा बीमार की खातिर॥

अब मानता है कौन सच्चे नेह के बन्धन।
सम्बन्ध के टुकड़े हुए व्यापार की खातिर॥

उनकी आँखों में तिरे फुटपाथ के सपने।
जो घर बनाना चाहते परिवार की खातिर॥

बनकर के खिलौना किसी मुफसिल की जवानी।
बाजार में बैठी है खरीदार की खातिर॥

सब लोग लगाते मेरे ईमान की बोली।
नीलामी बची है गमे—'बेजार' की खातिर॥

4-5

[तीन]

हर हृदय में बढ़ रही अब पीर है ।
देश की हालत बड़ी गम्भीर है ॥

प्रश्न रोटी का सभी वक्ष में ।
आज–कल चुभता हुआ—सा तीर है ॥

दौड़ में निर्णायकों ने ही कसी ।
धावकों के पाँव में जंजीर है ॥

कायरों का लोग अभिनन्दन करें ।
'औ' उपेक्षित—सा यहाँ हर वीर है ॥

सड़क पर असहाय पांडव देखते ।
हरण होता द्रोपदी का चीर है ॥

[चार]

शब्द अब होंगे दुधारी दोस्तो ।
जुल्म से हैं जंग जारी दोस्तो ॥

सत्य को सम्मान देता कौन है ?
झूठ का सिक्का है भारी दोस्तो ॥

सभ्यताओं के सजे बाजार में ।
बन गयी व्यापार नारी दोस्तो ॥

लूट में मशगूल है हर रहनुमा ।
लुट रही जनता बिचारी दोस्तो ॥

आदमी के रक्त में मदमस्त जो ।
टूटनी है वो खुमारी दोस्तो ॥

५-5

[पाँच]

शान अब खोने लगी है देश की।
आँख नम होने लगी है देश की॥
बात अब ईमान की मत कीजिए।
रूह तक सोने लगी है देश की॥
वहशियों की सभ्यता कांधों पे अब।
जिन्दगी ढोने लगी है देश की॥
दलबलुओं का करिश्मा देख कर।
आत्मा रोने लगी है देश की॥
आज कुर्सी की लड़ाई हर जगह।
आबरू धोने लगी है देश की॥

[छः]

अब कलम तलवार होने दीजिए।
दर्द को अंगार होने दीजिए॥
रोकिए मत वक्त के सैलाब को।
तेज उसकी धार होने दीजिए॥
सभ्यता के नाम पर ये जिस्म का।
बन्द अब व्यापार होने दीजिए॥
इस जमीं का जालिमों के खून से।
फिर नया शृंगार होने दीजिए॥
आदमीयत के लिए जो लड़ रहा।
मत उसे बेजार होने दीजिए॥

U-5

Scanned by CamScanner

विजयपाल सिंह

जन्म—१० जुलाई १९६५, महौ (अलीगढ़)

शिक्षा—एम० ए० हिन्दी

सम्प्रति— अध्ययन

लेखन—कविताएं

पता—ग्राम/पोस्ट—महौ जिला—अलीगढ़।

रचना-प्रक्रिया—सामाजिक-क्रान्ति के लिए कविता मेरे लिए एक साधन, एक विकल्प, एक हथियार की तरह प्रयुक्त की जाने वाली चीज है।

—:०:—

तेवरीपक्ष-4-5 पृ०-21

Scanned by CamScanner

[एक]

जब किसी भट्टी में ये परिवेश लोहे सा–तपेगा।
देश का हर आदमी औजार कोई तब गढ़ेगा।।

जुल्मो-सितम की आग माँ के गर्भ में पलती रही तो।
कोख से तब देखना ज्वालामुखी एक जन्म लेगा।।

टीसते हालात फिर से इस तरह के हो गए हैं।
अब भगत सिंह क्रान्ति का इस देश में पर्चा पढ़ेगा।।

सिलसिला यह यातनाओं का अगर चलता रहा तो।
फिर किसी आजाद के पिस्तौल हाथों में उठेगा।।

हर किसी की देखना तब मुट्ठियां भिचने लगेंगी।
न्याय जब झूठा मिलेगा, सत्य जब शूली चढ़ेगा।।

[दो]

सच्चाई को खराब कह रहे, जाने तुम कैसे शाइर हो ?
सूरज को महताब कह रहे, जाने तुम कैसे शाइर हो ?

जो चेहरा खूनी पंजों ने नोच-नोच रक्तिम कर डाला।
उसको सुर्ख गुलाब कर रहे, जाने तुम कैसे शाइर हो ?

लदी हुई हैं आज अश्रु से, जिस नारी की बेबस आँखें।
उनको जाम–शराब कह रहे, जाने तुम-कैसे शाइर हो ?

एक 'रेप' अंकित है जिस धड़कन पर, उसको।
उल्फत का सैलाब कह रहे, जाने तुम कैसे शाइर हो ?

एक क्रान्ति को खत लिख कर तुम फिर से देखो।
आते नहीं जवाब कह रहे ? जाने तुम कैसे शाइर हो ?

[तीन]

आप अपनी हकीकत छुपायेंगे कब तक ?
नकाबों में सम्मान पायेंगे कब तक ?

रोटियाँ तक न जो दे सकें आदमी को।
ऐसे अभियान कहिए, चलायेंगे कब तक ?

फूल को कर जुदा टहनियों से चमन की।
यूं गुलदस्ते अपने सजायेंगे कब तक ?

विदेशों से ले-ले के कर्जा वतन की।
ऐसे गरीबी हटायेंगे कब तक ?

आप सोयेंगे संसद में कितने दिनों तक ?
हम किवाड़ों दस्तक लगायेंगे कब तक ?

[चार]

आंधियों का सर कुचलना चाहिए।
साथियो मौसम बदलना चाहिए ।।

जो सवेरा हर जहन में कर सके।
आज वो सूरज निकलना चाहिए ।।

फिर समय की मांग है कुछ इस तरह-से।
ठोकरें खाकर सम्हलना चाहिए ।।

आग में तपकर निखरती वेदना।
इस तरह का ख्वाब पलना चाहिए ।।

यदि हिमालय झूठ का लांघे युधिष्ठर।
तो समूचा जिस्म गलना चाहिए।।

[पांच]

देश हुआ बीमार देश में ।
ये कैसे आसार देश में ?
आजादी कुर्सी के नीचे ।
लुटती बारम्बार देश में ।।
जिसे मसीहा लोग समझते ।
कर जाता वह वार देश में ।।
कर्तव्यों की चिन्ता किसको ?
सब चाहें अधिकार देश में ।।
बस जनता को चूस-चूस कर ।
पनप रहे गद्दार देश में ।।

[छः]

इस देश में तो वर्जना पूजी गयी ।
हर घिनौनी आस्था पूजी गयी ।।
सांस घुटने से बचाने के लिये ।
एक जहरीली हवा पूजी गयी ।।
बात अमृत की चली तो यह हुआ ।
बज़्म में लाकर सुरा पूजी गयी ।।
इस तरह से आदमी हिंसक हुआ ।
जंगलों की सभ्यता पूजी गयी ।।
अप्रकाशित रह गया सच देश में ।
झूठ की हर पुस्तिका पूजी गयी ।।

५-5

Scanned by CamScanner

क्रान्तिकारियों का विश्वास है कि देश को क्रान्ति से ही स्वतन्त्रता मिलेगी। वे जिस क्रान्ति के लिये प्रयत्नशील हैं, उसका अर्थ केवल यह नहीं है कि विदेशी शासकों तथा उनके पिट्ठुओं से क्रान्तिकारियों का केवल सशस्त्र संघर्ष हो, बल्कि इस सशस्त्र संघर्ष के साथ-साथ नवीन सामाजिक व्यवस्था के द्वार देश के लिये खुल जाएं। क्रान्ति पूंजीवाद, वर्गवाद तथा कुछ लोगों को ही विशेषाधिकार दिलाने वाली प्रणाली का अन्त कर राष्ट्र को अपने पैरों पर खड़ा करेगी। तब नवीन राष्ट्र और नये समाज का जन्म होगा।

आज की तरुण पीढ़ी को जो मानसिक गुलामी तथा धार्मिक रूढ़िवादी बन्धन जकड़े हैं, उसी में क्रान्तिकारी प्रगतिशीलता के अंकुर देख रहे हैं। नवयुवक जैसे-जैसे मनोविज्ञान आत्मसात करता जाएगा वैसे-वैसे राष्ट्र की गुलामी का चित्र उसके सामने स्पष्ट होता जाएगा तथा उसकी देश को स्वतन्त्र कराने की इच्छा प्रबल होती जाएगी। उसका यह क्रम तब तक चलता रहेगा, जब तक कि युवक न्याय, क्रोध और क्षोभ से ओत-प्रोत हो अन्याय करने वालों की हत्या न प्रारम्भ कर देगा। इस प्रकार देश में आतंकवाद का जन्म होगा।

आतंकवाद सम्पूर्ण क्रान्ति नहीं और क्रान्ति भी आतंकवाद के बिना पूर्ण नहीं। यह तो एक क्रान्ति का एक आवश्यक और अवश्य-सम्भावी अंग है। इस सिद्धान्त का समर्थन इतिहास की किसी भी क्रान्ति के विश्लेषण के द्वारा जाना जा सकता है। आतंकवाद आतताइयों के मन में भय पैदा कर तथा पीड़ित जनता में प्रतिशोध की भावना जाग्रत कर उसे शक्ति प्रदान करता है। अस्थिर भावना वाले लोगों की इससे हिम्मत बढ़ती है तथा उनमें आत्म विश्वास जागता है। इससे दुनिया के सामने क्रान्ति का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है। क्योंकि ये किसी राष्ट्र की स्वतंत्रता की उत्कृष्ट महत्वाकांक्षा का विश्वास दिलाने वाले प्रमाण हैं। जैसे दूसरे देशों में होता आया है, वैसे ही भारत में भी आतंकवाद क्रान्ति का रूप धारण कर लेगा और अन्त में क्रान्ति से ही देश को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्वतन्त्रता मिलेगी।

—अमर क्रान्तिकारी भगवती चरण वोहरा

—:o:—

नेवरीपक्ष-4-5 पृ०-25

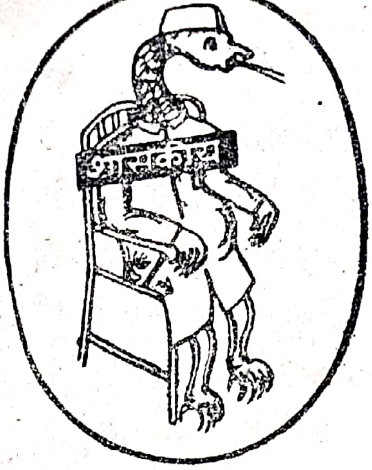

हुजूर ! सरकार ! मेरे परवरदिगार !

आपकी जय हो, हमारी तो इच्छा बस यही है कि इस देश की अस्मिता सुरक्षित रहे न रहे आपकी राजगद्दी जरूर सुरक्षित रहनी चाहिए। क्योंकि यह कमाल आपको ही आता है कि आपके सम्पर्क में वशिष्ठ और विश्वामित्र जैसे मंत्री भी दुर्योधन हो जाते हैं और पुष्पक विमान में ही चीरहरण करने लग जाते हैं। क्या ऐसे कारनामों से देश का नाम ऊँचा नहीं होता ?

हुजूर ! सरकार ! मेरे परवरदिगार !

और आपके साथ सहयोगी [illegible] इन्द्र का [illegible] इसमें बुरा क्या है, क्या इससे देवताओं [illegible] और [illegible] कहो [illegible] में [illegible] अखबार वालों को [illegible] हल्ला मचाने [illegible] [illegible] इस बात [illegible] के [illegible] लिए [illegible] मजबूत हो जाना चाहिए [illegible] आवारागर्दी नहीं करनी चाहिए।

हुजूर ! सरकार ! मेरे परवरदिगार !

[illegible] आपके पुत्र [illegible] कहा है कि [illegible] [illegible] [illegible] लेकिन [illegible] कि आपके [illegible] है। इस [illegible] [illegible] राम का अवतार [illegible] [illegible] ऐसे पर [illegible] शामिल हो जाता है।

हुजूर ! सरकार ! मेरे परवरदिगार !

[illegible] के अनुसार [illegible] नहीं [illegible] करते। [illegible] [illegible] को [illegible] [illegible]

तेवरीपक्ष-4-5

पृ0-24

अपमानित करके राम भी सुखी नहीं रहे। इतने बड़े अपमान पर आपकी जगह कोई और होता तो अपने थूक में डूबकर आत्महत्या कर लेता। ऐसा अपमान तो मुगलों के जमाने में भी नहीं हुआ।

हुजूर ! सरकार ! मेरे परवरदिगार !

धिक्कार है ऐसी जनता पर जिसने आपको इस देश का मालिक नहीं माना। जबकि मैं जानता हूँ—आप हैं तो देश है, संस्कृति है, सभ्यता है, साम्प्रदायिक सद्-भाव है, अखंडता है, शिष्टता है।

अरुण लहरी
टीकाराम बिल्डिंग
आगरा रोड
अलीगढ़—२०२००१

—:०:—

जनाक्रोश की सशक्त अभिव्यक्ति

शीघ्र प्रकाश्य तेवरी संग्रह—३

इतिहास घायल है

सम्पादक—रमेशराज

मूल्य—१० रुपये

इस संग्रह के सशक्त हस्ताक्षर हैं :—

अरुण लहरी, बिजयपाल सिंह, योगेन्द्र शर्मा, बेजार, सुरेश त्रस्त, रमेशराज, गजेन्द्र बेबस, अनिल कुमार 'अनिल' आदि।

Scanned by CamScanner

॥ तेवरियाँ ॥

[एक]

चली हैं किस तरह हवा भइया ।
दर्द भी हो गया दवा भइया ॥
पांव उसके ही क़लम कर डालें ।
कदम दो चार जो चला भइया ॥
तेरी सूरत से नहीं गिला कोई ।
तेरी सीरत से है गिला भइया ॥
लोग दैरो—हरम में फिरते हैं ।
मैं आदमीयत ढूंढता भइया ।
आज़ किस हादसे से बचके रहें ।
आदमी खुद है हादसा भइया ॥

—फजरुद्दीन बेसर
सारकस, जिला—गुड़गावां–१२२१०८

[दो]

आदमी से आदमी डरने लगे हैं ।
अब परस्पर मारने मरने लगे हैं ॥
सर्प—से चित्रित सुनहरे पृष्ठ उनके ।
प्यार से संसार को डसने लगे हैं ॥
घोंसला बनकर चमन में जो रहे थे ।
वे शिकारी की तरह रहने लगे हैं ॥

—हरिनारायण सिंह 'हरि'
जौनापुर, मोहीउद्दीन नगर
समस्तीपुर (बिहार)

Scanned by CamScanner

कबीर जिन्दा है

(तेवरी—संग्रह—२)

पर कतिपय समीक्षांश

ये उस आग की कहानी हैं जिसमें सम्पूर्ण भारत झुलस रहा है।

प्रतिशीर्षक, मार्च—८४

शोषण पर सीधा प्रहार किया गया है।

जंग जारी है, २७ फरवरी, ११ मार्च—८४

सम्पादक सहित लेखक किसी दिन लाल झण्डा थाम लें तो आश्चर्य की बात नहीं है।

अकेला, दिनांक—अज्ञात पृष्ठ ५

कलम स्याही पीकर आग उगलने की क्षमता रखती है। कुल मिलाकर 'बिस्मिल' जिन्दा हो उठे हैं

दुनियादार, फरवरी—८४

यह संकलन पथ भ्रमित व्यक्तियों तथा थोथे राष्ट्रीय, सामाजिक उद्घोषकों के लिए एक जीवन्त चुनौती है।

कोमा, बसन्त—८४, पृष्ठ—१५

रचनाएं अपनी संग्रहीत गरिमा में काल के निर्धारण, राग द्वेष रूपी तराजू के पासंग को ईमानदारी से जाहिर करती हैं।

कोणार्क, जन०—मार्च—८४

शोषिक वर्ग के खिलाफ सक्रिय मोर्चेबन्दी करते हुए इन तेवरियों से आक्रोश व संघर्ष की मुद्रा बनती है।

गौर दर्शन, १७ फर०—८४

तेवरी रचनागत संदर्भ में गजल से मेल खाती नहीं दिखती है।

खिले-अधखिले, जून—८४

सम्पादक का पूर्वाग्रह कि इन्हें तेवरी विधा की कविताएं माना जाय, भ्रामक प्रतीत होता है।

सानुबन्ध, मई—८४

कविता हथियार की शक्ल में उपयोग हो सकती है और आदमखोरों के भेड़ियेपन को शब्दों से छलनी कर सकती है, यह साफ दिखाई देने लगा है।

लघु आघात, जून—८४

इस संग्रह में सम्मिलित कवि हिन्दू-मुस्लिम-सिख-ईसाई एकता में विश्वास रखते हैं।

मार्ग दीप—८४, पृष्ठ—२७

तेवरीपक्ष - ५ - 5

५० 28

Scanned by CamScanner

संग्रह में सम्मिलित तेवरीकारों के कुछ ही तेवर ऐसे हैं जो अमिट छाप छोड़ते हैं।

अंकुर आवाज, मई—८४

रचनाओं में घिनौनी और पतित राजनीति, कुव्यवस्था, भ्रष्टाचार और साधारण जनता के दुखदर्द को भली-भाँति दर्शाया गया है।

आगमन, अ०—जू०—८४, पृ०—२५

कुछ रचननाएं बिच्छुओं के डंक की तरह हैं, मगर डर है इस यथार्थ से—

वैसे तो बिच्छुओं की तरह काटते हैं ये।
अटकी पे मगर तुलवा तलक चाटते हैं ये॥

नवोदित स्वर, अंक—२—८४

—:•:—

जन–विरोधी मानसिकता पर एक और प्रहार

तेवरी संग्रह—२

कबीर जिन्दा है

सम्पादक—रमेशराज

(सहयोगी मूल्य—१० सजिल्द–२० रुपये)

राजेश महरोत्रा, गिरि मोहन गुरु, ऋषभदेव शर्मा देवराज, डा० देवराज, फजल इमाम मल्लिक, राजकुमार निजात विक्रम सोनी, डा० एन० सिंह, अरुण लहरी, अनिल 'अनल', योगेन्द्र शर्मा, सुरेश त्रस्त, रमेशराज, आदि।

सत्यप्रकाशन की अनुपम भेंट

'मचान' तेवरी संग्रह

सम्पादक—पवन कुमार पवन

मूल्य—पांच रुपये, सजिल्द—दस रुपये

संपर्क—श्री पवन कुमार 'पवन', पशु चिकित्सालय, शामली

Scanned by CamScanner

॥ तेवरियाँ ॥

[एक]

कर रहे हैं देश को कमजोर।
नेता, साहूकार, तस्कर, चोर॥
संस्कृति औ' सभ्यता को बेचते।
घूमते फिरते हैं आदमखोर॥
इस तरह की चल रही हवा।
दुःख रहा है आज पोर-पोर॥

—सुहेल अख्तर
ख्वाबे-आशियां
बदर बाग, अलीगढ़।

[दो]

माना बहुत दिखा चुके हो यार तमाशा।
लेकिन पलट ही जायेगा एक रोज ये पाशा॥
चाहे हजार डालो यूं ही तिलिस्म के घेरे।
पर तोड़ ही डालेगा अब एहसास जरा-सा॥
करतब को उनके देखकर दुनिया हुई हैरां।
कहने लगी-बुलबुल ने लो सैयाद को फांसा॥

—चाँद मुंगेरी
II सी/१—१४१
बोकारो स्टील सिटी—८२७००१

Scanned by CamScanner

।। तेवरी : जन-अनुभूतियों का प्रसव ।।

सामान्यतः अनुभूतियों का अर्थ-किसी उद्दीपक के प्रभाव का अनुभव है। किसी दृश्य या घटना-दुर्घटनाक्रम को देखकर मन में जैसा भाव उठता है, यह भाव उसके प्रति अनुभूति है।

परिवर्तन प्रकृति का अटल नियम है, परिवर्तन किसी भी वस्तु या समाज को कभी एक-सा नहीं रहने देता। परिवर्तन गति का द्योतक है। जहाँ गति नहीं, वहाँ जड़ता है और जड़ता का दूसरा नाम है—मृत्यु।

इस प्रकार समाज के परिवर्तनशील स्वभाव के कारण साहित्य भी उससे अछूता नहीं रह सका है। वैदिक काल सदाचार, कठोर संयम, धर्म से बंधा हुआ था परिणामतः ब्रह्म स्वरूप के निरूपण करने वाली ऋचाओं को स्थान मिला। उसी तरह रीति कालीन साहित्य श्रृंगार और सौन्दर्य की भावना तथा भक्तिकालीन साहित्य में अपने उपास्य के प्रति दास भावनाओं या अनुभूतियों का आधिक्य है। चूंकि समय के साथ-साथ सामाजिक उद्दीपकों के आकार, स्वभाव और उनकी तीव्रता में असह्य परिवर्तन आया, परिणाम स्वरुप अनुभूतियाँ भी तल्ख होती चली गयीं, और इसी तल्खी ने जन्म दिया आक्रोश, विद्रोह और व्यंग्य को।

एक तरफ जहाँ वैज्ञानिक विकास के कारण सारे विश्व में दूरियाँ सिमटती जा रही हैं, वहीं आम जनता राजनीतिक, धार्मिक और साम्प्रदायिक कारणों से उत्पीडन और अत्याचार का शिकार हो रही है। सम्पूर्ण सामाजिक चित्र अजनबीपन, विग्रह, द्वेष अविश्वास और स्वार्थों में रेखांकित है, जहाँ सम्बन्ध जितनी जल्दी बनते हैं, उतनी ही शीघ्रता से टूट भी जाते हैं। दूसरे शब्दों में आज समाज भौतिक आपाधापी से आक्रान्त, आर्थिक हितों के बीच आस्था, सौहार्द, विश्वास, प्रेम की दरिद्रता का नंगा नाच कर रहा है।

जब वर्तमान समाज इस प्रकार की विकृतियों और असंगतियों से ओत-प्रोत है तो उसकी पृष्ठ भूमि में लिखा गया साहित्य भिन्न कैसे हो सकता है? और यही कारण है कि तेवरी सामाजिक संत्रास से उत्पन्न अनुभूतियों की एक पीड़ा मय प्रसूति है, जिसकी नींव स्वस्थ सामाजिक-चेतना पर आधारित है।

तेवरीपक्ष-4-5 पृ० 30

—अरुण लहरी

TEWARI CHINTAN

(Bezar)

'स्मेकल की प्रतिनिधि कविताएं
कवि—डा० स्मेकल
सम्पादक—जगदीश चन्द्र 'जीत'
प्रकाशक—शान्ति कुन्ज प्रकाशन, ए–२०/४, मीरा मार्ग, दिल्ली।

समीक्षालय

प्रस्तुत कविता संग्रह हमसे बहुत दूर आलोमाउत्स नगर, चेकोस्लोवाकिया में जन्मे डा० ओदोलेन स्मेकल की ऐसी कविताओं का संग्रह है जिसमें भारतवर्ष की माटी की सुगन्ध है। भारतवासियों के सुख-दुख, हास-परिहास, उपेक्षा-अपेक्षा और राजनीतिक चालबाजियों की शिकार जनता की त्रादशी कुंठा, भूख का एक संवेदनात्मक लेखा-जोखा कवि ने बड़े ही मार्मिक और सरल शब्दों में प्रस्तुत किया है, साथ ही 'ठीकम ठाक्' जैसे ग्रामीण शब्दावली से ओत-प्रोत शब्दों का माधुर्य भी चन्दनी सुगंध फैलाता है। कविताएं पढ़ते-पढ़ते ऐसा अवश्य लगता है कि इनमें ऐसा 'कुछ' अवश्य है जो पाठक के मन को एक आत्मीयता के साथ छूता है, किसी अबोध बच्चे की तरह दुलारता है।

'सैकड़ों बार', 'त्रिपुटी', 'मेरी प्रीति तेरे गीत' शीर्षक से कविताएं जहाँ प्यार की तलाश में बसंत के सपने देखती हैं वहीं 'आखिरी दम तक', जहाँ जीना कहलाता है, 'सुख' 'कोरे नारे', फटे हाल', 'यह देश' आदि में जीवन का एक कटुतम और त्रादश यथार्थ भी है। कुल मिलाकर संग्रह हर दृष्टिकोण से स्वागत योग्य है।

'मानचित्र' (लघुकथा संग्रह)
संपादक—विक्रम सोनी
संपर्क—आई—१६९, रविशंकर शुक्ल नगर, इन्दौर।

समकालीन विसंगतियों, विकृतियों पर घन की तरह प्रहार करने वाली विधा का नाम है, लघुकथा। यह जीवन में हर पल घटने वाली दुर्घटनाओं, हादसों, बनते-बिगड़ते मानवीय मूल्यों का एक ऐसा ब्यौरा है जिसमें इस कुचक्र के पीछे कभी कोई नेता नंगा होता है तो कभी समाज सेवी।

'मानचित्र' लघु कथा संग्रह की लघुकथाओं में जहाँ पुलिस की आतंकवादी प्रवृत्तियों की दुर्गन्ध आती है वहीं महाजनों के खातों में दलित वर्ग की भावनाओं की सिसकन भी है।

नवनिकष-५-५ पृ० ३१

Scanned by CamScanner

रवीन्द्र कंचन 'चरित्र', जया नर्गिस 'प्रतिफल' डा० महेन्द्र कुमार ठाकुर 'इज्जत' पारस दासोत, 'महँगाई', रामनिवास मानव 'टालरेंस', मन्जू पाठक, 'जुर्म', सुरेश गुप्त 'अद्‌भुत' राजेन्द्र सोनी 'प्रभाव' सुरेन्द्र वर्मा 'आदत' और 'धर्म की लपेट', नेसार नाज 'नंगापन' योगेन्द्र शर्मा 'भेड़पुरा' चरणसिंह अमी 'भूल' आदि लघुकथाएँ शिल्प और कथ्य की दृष्टि से पाठक के मन को छीलती हैं। इसके साथ ही कुछ ल[illegible] कथाएं ऐसी भी हैं जिन्हें सिर्फ भर्ती की या बकवास ही कहा जा सकता है, यदि विक्रम सोनी ने लघुकथाओं के चयन में थोड़ी-सी सख्ती बरती होती तो निस्संदेह इस स्थिति से बचा जा सकता था। मुद्रण आदि की दृष्टि से संकलन साफ-सुथरा है।

मुक्ताँगन, मुक्ताकाश (कविता संग्रह)

कवि—ताराचन्द पाल 'बेकल', संपर्क—शांति प्र०, ज्वालापुर, जिला—सहारनपु[र]

ताराचन्द पाल 'बेकल' की नवीन काव्य-कृतियों में 'मुक्ताकाश व मुक्ताँ[गन]' देश की अस्त-व्यस्त स्थिति, दिशाहीनता, शोषण तथा कुत्सित राजनीतिक व्यवस्था के प्रति कवि की छटपटाहट उसकी रचनाओं में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। कवि की सम्पूर्ण रचना-धर्मिता आशावाद पर टिकी है। किन्तु रचनाओं में व्यंग्य, विद्रूप, कटुक्तियों के बावजूद एक ही से भावों के संचरण की पुनरावृत्ति अखरती है। फिर भी समाजोन्मुख अर्न्तअनुभूतियों व सामाजिक, राजनीतिक व्यवस्था के प्रति छट-पटा[हट] के लिए वे साधुवाद के पात्र हैं। मुद्रण साफ है।

—:o:—

स्वीकृति संख्या—डी०/एल० १०२—८३

बुक, पोस्ट मुद्रित पुस्तिका

सेवा में,

श्री [illegible]

[illegible]

[illegible] अलीगढ़ [illegible]

सार्थक—सृजन प्रकाशन, १५/१०८ ईसानगर, अलीगढ़ के लिए सम्पादक, मुद्रक, प्रकाशक रमेशराज द्वारा गीता प्रिन्टर्स, द्रोपदी मार्केट, सासनी गेट अलीगढ़ से मुद्रित।

Scanned by CamScanner